जनसत्ता

पाक का चेहरा

नौसेना के पूर्व अधिकारी कुलभूषण जाधव के मामले में अंतरराष्ट्रीय न्यायालय में भारत ने जो अकाट्य तर्क पेश किए हैं उनसे पाकिस्तान बेनकाब हो गया है। अब यह साफ है कि किस तरह एक निर्दोष भारतीय को पाकिस्तान ने झूठे मामले में फंसा कर गिरफ्तार किया और सैन्य अदालत में मुकदमा चला कर फांसी की सजा सुना दी। कुलभूषण जाधव इन दिनों पाकिस्तान की जेल में बंद हैं। पाकिस्तान ने जाधव के बारे में भारत को मांगी गई जानकारियां आज तक मुहैया नहीं कराईं, न इस मामले में उसने वियना संधि का पालन किया। इस मामले में वह कई तरह के झूठ भी बोल चुका है। पाकिस्तान की सेना ने 2016 में जाधव को ईरान से अगवा कर जेल में बंद कर दिया था और सैन्य अदालत में उन पर पाकिस्तान की जासूसी करने का मुकदमा चलाया गया, यातनाएं देकर जबरन अपराध कबूल करवाया गया और फांसी की सजा सुना दी गई। जाधव ईरान में अपना कारोबार कर रहे थे। अंतरराष्ट्रीय अदालत का फैसला कुछ भी आए, लेकिन पूरी दुनिया देख रही है कि पाकिस्तान सिर्फ अपने हितों के लिए भारत के खिलाफ जाधव को एक मोहरे के तौर पर इस्तेमाल कर रहा है। वह अंतरराष्ट्रीय मंचों पर अपने पक्ष में इस बात को भुना रहा है कि जाधव पाकिस्तान के खिलाफ काम कर रहे थे।

लेकिन झूठ के पांव नहीं होते। पाकिस्तान खुद भी यह जान रहा है कि जाधव मामले में वह अंतरराष्ट्रीय अदालत में टिक नहीं पाएगा। जिस तरह से उसने जाधव के खिलाफ सबूत गढ़े, सारे कानूनों को ताक पर रख कर मुकदमा चलाया और फांसी की सजा सुनाई, भारत की सरकार और जाधव के परिवार को अंधेरे में रखा, उससे साफ है कि सब कुछ पूर्व नियोजित था। जाधव के बचाव में भारतीय पक्ष ने जितनी दलीलें दी हैं, वे पाकिस्तान को कठघरे में खड़ा करती हैं। इनका पाकिस्तान के पास कोई जवाब नहीं है। जाधव से मुलाकात के लिए भारत ने पाकिस्तान से तेरह बार राजनयिक पहुंच उपलब्ध कराने का आग्रह किया, लेकिन इसे पाकिस्तान ने खारिज कर दिया। जाधव को कोई कानूनी सहायता मुहैया नहीं कराई जा रही, न ही भारत सरकार को उनके मुकदमे से संबंधित जानकारियां दी जा रही हैं। हालांकि दो साल पहले जाधव की मां और पत्नी को उनसे मिलवाने का दिखावा जरूर किया था पाकिस्तान ने, लेकिन इस दौरान उसने बहुत ही शर्मनाक व्यवहार किया था। भारत ने सबसे बड़ा सवाल तो पाकिस्तान की सैन्य अदालत को लेकर ही खड़ा किया है। पाक की सैन्य अदालतों के जजों के पास कानून की डिग्री तक नहीं होती। ऐसे में मुकदमा सिर्फ सैन्य प्रमुख के इशारे पर ही चलता है। जाधव के मामले में यही हुआ।

भारत के निर्दोष नागरिकों को पकड़ कर उन्हें संगीन मामलों में फंसाना, उन पर मुकदमा चलाना और सजा देकर फिर उसका राजनीतिक इस्तेमाल करना पाकिस्तान का पुराना इतिहास रहा है। सरबजीत और अन्य कैदियों के मामले भी ऐसे ही थे, जब इन कैदियों को झूठे मामलों में फंसा कर इन पर मुकदमा चलाया गया और फिर जेल में ही इन्हें मरवा दिया गया। सरबजीत की रिहाई के लिए भारत ने काफी दबाव बनाया था, लेकिन रिहाई के कुछ समय पहले ही उन पर जेल में हमला हो गया, बाद में उनका शव ही भारत पहुंचा था। इसी तरह चमेल सिंह की भी जेल में ही हत्या करवा दी गई थी। ऐसे में जाधव की सुरक्षा को लेकर भारत का चिंतित होना स्वाभाविक है। हालांकि इस बात की पूरी संभावना है कि जाधव मामले में पाकिस्तान अंतरराष्ट्रीय न्यायालय में हार सकता है। मगर देखना यह है कि इसके बाद उसका अगला पैंतरा क्या सामने आता है!

अराजकता की दिशा

इसमें कोई दो राय नहीं कि पुलवामा में आतंकी हमले में सीआरपीएफ के बयालीस जवानों की मौत के बाद समूचे देश में शोक का माहौल है। हर संवेदनशील व्यक्ति दुख से भरा है और इस हमले के जिम्मेदार आतंकियों के खिलाफ सख्त कार्रवाई की मांग कर रहा है। लेकिन क्या यह स्थिति ऐसी गतिविधियों की छूट दे देती है, जिसमें लोग अराजक हो जाएं? पुलवामा हमले के बाद आतंकियों के खिलाफ आम लोगों के गुस्से को समझा जा सकता है। मगर इस क्रम में देश के कई इलाकों से कश्मीरी लोगों पर हमले की जैसी खबरें आ रही हैं, वे चिंताजनक हैं। कहीं कश्मीर से निकल कर किसी अन्य राज्य में व्यवसाय करने गए लोगों और उनकी दुकानों पर हमले किए गए, उन्हें मारा-पीटा गया और तोड़फोड़ की गई, तो कहीं कश्मीरी विद्यार्थियों को गुस्से का शिकार बनाया गया। हालत यह है कि देहरादून में कुछ संगठनों के आक्रामक रुख को देखते हुए एक शिक्षण संस्थान ने अपने एक डीन को निलंबित कर दिया और दो अन्य कॉलेजों ने कश्मीरी विद्यार्थियों को दाखिला नहीं देने की घोषणा कर दी है।

अगर कोई व्यक्ति देश विरोधी गतिविधियों में शामिल है तो उसके खिलाफ कानूनी कार्रवाई होनी चाहिए। लेकिन सिर्फ इस बात के लिए किसी पर हमला करने को कैसे सही ठहराया जा सकता है कि वह कश्मीरी है? सरकार और सुरक्षा बलों की ओर से यह साफ किया गया है कि पुलवामा में सीआरपीएफ पर हमला करने वाला एक आत्मघाती आतंकी था। यह छिपा नहीं है कि कश्मीर और वहां के लोग खुद लंबे समय से आतंकवाद की समस्या झेल रहे हैं। ज्यादातर कश्मीरी आतंकवाद से खुद को अलग करके सामान्य जीवन जीना चाहते हैं। वे अन्य राज्यों में व्यवसाय करने या फिर बेहतर शिक्षा और रोजगार हासिल करने के लिए निकल रहे हैं तो इसका मतलब यही है कि वे देश को अपना मानते हैं और देश की मुख्यधारा में शामिल होना चाहते हैं। खुद सरकार लंबे समय से कश्मीरी अवाम को मुख्यधारा में शामिल करने के लिए कई योजनाओं पर काम कर रही है और इसमें काफी हद तक कामयाबी भी मिली है। दूसरी ओर पुलवामा हमले के बाद भावनाओं में बह रहे कुछ लोग या फिर इस घटना का राजनीतिक इस्तेमाल करने वाले संगठन कश्मीरी पहचान को आतंकवाद के समर्थक के रूप में प्रचारित करने की कोशिश कर रहे हैं। यह उन तमाम पहलकदमियों को नाकाम करने का रास्ता है, जिनके जरिए सरकार कश्मीर में आतंकवाद की समस्या को खत्म करने की कोशिश कर रही है।

यह ध्यान रखने की जरूरत है कि कश्मीर में अलगाववादी और आतंकी संगठनों का मकसद यही है कि कैसे कश्मीर को देश के बाकी हिस्सों से अलग-थलग कर दिया जाए। इस लिहाज से देखें तो कई राज्यों में कश्मीरी लोगों या विद्यार्थियों पर हो रहे हमले उन्हें खुद को देश से अलग-थलग मानने पर मजबूर कर सकते हैं। इससे आतंकियों की मंशा ही पूरी होगी। हालांकि सच यह भी है कि कश्मीरियों पर हमलों के बाद देश भर में उन्हें सुरक्षा और अपनापन देने की कई खबरें भी आई हैं। खुद सीआरपीएफ ने 'मददगार' हेल्पलाइन के जरिए पीड़ित कश्मीरियों को हर तरह की सहायता मुहैया कराने का आश्वासन दिया है। देश की एकता की असली ताकत यही है। यों भी, कश्मीर भारत का अभिन्न हिस्सा है और देश की एकता और अखंडता को बनाए रखने के लिए सरकार को सख्त कदम उठाने की जरूरत है। एक लोकतांत्रिक व्यवस्था और कानून के राज में किसी भी अपराध के आरोपियों के खिलाफ कार्रवाई और उन्हें सजा दिलाने के लिए एक तंत्र होता है और उसी के जरिए कानूनी प्रक्रिया का संचालन देश के हित में होता है।

कल्पमेधा

तिरस्कृत होने का रास्ता है तिरस्कारों के आगे सिर झुका देना। मनुष्य का उतना ही आदर होता है जितना वह दूसरों से पाने में समर्थ होता है।
-हैजलिट

बुनियादी आय और संकट

सोनल छाया

बुनियादी आय योजना से लाभ और नुकसान दोनों होने की संभावना है। भारत जैसे बड़े और विविधता से परिपूर्ण देश में इसे लागू करना आसान नहीं है। सार्वभौमिक बुनियादी आय को लागू करने के लिए संसाधनों की जरूरत होगी, जिसके लिए मौजूदा सरकारी योजनाओं जैसे मनरेगा, सार्वजनिक वितरण प्रणाली आदि को बंद करना होगा। अगर ऐसा हुआ तो लोगों के बीच अविश्वास का माहौल बनेगा। लाभार्थियों की पहचान करने में भी समस्याएं आएंगी।

अंतरिम बजट में छोटे और सीमांत किसानों को सहायता के रूप में एक सुनिश्चित आय देने के लिए प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि बनाने की घोषणा की गई है। भारत दुनिया का पहला देश है जो बारह करोड़ से अधिक किसानों को प्रत्यक्ष आय हस्तांतरण की सुविधा उपलब्ध कराने जा रहा है। यह प्रस्तावित योजना दुनिया के दूसरे देशों में ऐसी नकद हस्तांतरण योजना को लागू करने वाले लाभार्थियों की औसत संख्या से चालीस हजार गुना अधिक है। प्रधानमंत्री किसान सम्मान योजना के तहत दी जाने वाली सहायता राशि महज सात अमेरिकी डॉलर प्रति माह है, जो अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है। बहरहाल, सरकार द्वारा प्रत्येक किसान के खाते में छह हजार रुपए सालाना हस्तांतरित करने की घोषणा के साथ ही भारत में सार्वभौमिक बुनियादी आय की सार्थकता पर गंभीर विमर्श की जरूरत महसूस की जा रही है।

भारत में बुनियादी आय को सार्वभौमिक बुनियादी आय की संकल्पना से जोड़ कर देखा जाता है। इसका आगाज अठारहवीं शताब्दी में गरीबी दूर करने के लिए किया गया था। अठारहवीं शताब्दी को औद्योगिकीकरण का काल माना जाता है। इस सदी में कल-कारखानों की शुरुआत हुई थी। पूंजीवाद की संकल्पना ने तेजी से विस्तार पाया। वित्त वर्ष 2016-17 के आर्थिक सर्वे की रिपोर्ट में सार्वभौमिक बुनियादी आय की संकल्पना पर चालीस पन्नों में विस्तार से चर्चा की गई, जिसमें इसे गरीबी दूर करने और असमानता कम करने के उपाय के रूप में देखा गया। भारत में इस संकल्पना के तहत सभी नागरिकों को एक निश्चित राशि देने का प्रस्ताव किया गया है, ताकि सभी अपना जीवनयापन कर सकें। कुछ अर्थशास्त्रियों ने इस संकल्पना का समर्थन यह कह कर किया कि भारत जैसे भ्रष्ट देश में सभी नागरिकों को उनके जीवनयापन के लिए एक निश्चित राशि दी जानी जरूरी है। इसमें दो राय नहीं है कि खातों में नकद हस्तांतरण सशर्त या बिना शर्त घरों की आय बढ़ाता है। इस संकल्पना के समर्थकों का मानना है कि इस उपाय की मदद से व्यापक स्तर पर लोगों का कल्याण किया जा सकता है। भारत में इसे लागू करना लोगों के कल्याण करने के मामले में एक क्रांतिकारी कदम साबित हो सकता है। साथ ही, गरीबी दूर करने के मामले में भी यह मील का पत्थर साबित हो सकता है।

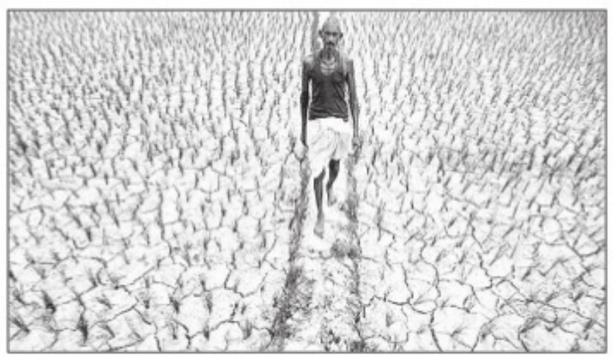

मौजूदा समय में देश में श्रमिकों के संख्या बल में महिलाओं की संख्या काफी कम है। देश में असंगठित क्षेत्र का एक व्यापक दायरा होने के कारण महिला श्रमिकों का शोषण हो रहा है, लेकिन खातों में नकद हस्तांतरण से उनकी आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति बदल सकती है। महिलाओं के आर्थिक रूप से सबल होने से लिंग अनुपात में भी समानता आएगी। इसलिए सार्वभौमिक बुनियादी आय से महिला सशक्तिकरण को बल मिलेगा, जिसका सकारात्मक प्रभाव पूरे समाज पर पड़ सकता है। वर्तमान में लगभग नब्बे फीसद से अधिक कामगार असंगठित क्षेत्र में काम करते हैं, जिनमें दस से कम संख्या में काम करने वाले श्रमिकों की एक बड़ी संख्या है। चूंकि, फिलवक्त दस की संख्या से नीचे काम करने वाले कामगारों पर सरकार नजर नहीं रखती है, लिहाजा ऐसे श्रमिक भविष्य निधि में अपना योगदान नहीं कर पाते हैं और इन्हें पेंशन, बीमा और स्वास्थ्य से जुड़े फायदे नहीं मिल पाते हैं। सार्वभौमिक बुनियादी आय से ऐसे श्रमिकों को सीधे तौर पर लाभ मिल सकेगा। इस योजना की वजह से लोग बैंक से जुड़ने के लिए भी प्रेरित होंगे, जिससे वित्तीय समावेशन की संकल्पना को साकार करने में आसानी होगी। साथ ही आम लोगों को बैंक से कर्ज भी मिल सकेगा, जिससे मांग एवं आपूर्ति के प्रवाह में तेजी आएगी और विकास को बल मिलेगा।

कई देश हैं, जिन्होंने इस तरह से जरूरतमंदों को वित्तीय सहायता देने की कोशिश की, लेकिन पाया कि ऐसी योजना को चलाने से वैसे कारकों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, जिनकी वजह से असमानताएं बढ़ती हैं। हालांकि, इस योजना का सकारात्मक पक्ष यह है कि इसकी मदद से वंचित तबकों का आर्थिक एवं सामाजिक रूप से उन्नयन करने के साथ-साथ मौजूदा सबसिडी या अन्य सरकारी योजनाओं को लागू करने के दौरान बिचौलिए, भ्रष्टाचार आदि पर भी लगाम लगेगी, जिससे सरकारी निधि की बंदरबांट की संभावना कम होगी।

बुनियादी आय की संकल्पना के विरोधियों का मानना है कि मुफ्त पैसा लोगों को आलसी बनाता है और लाभार्थी काम करने से परहेज करने लगते हैं। मुफ्त में पैसा मिलने से जो श्रमिक कार्य कर रहे हैं, वे भी काम करने से परहेज करने लगेंगे जिससे श्रमिक आपूर्ति में कमी आएगी। मुफ्त का पैसा मिलने से लोगों के बीच फिजूलखर्ची की आदत भी विकसित होगी। घर के पुरुष सदस्यों में नशे और जुआ खेलने की प्रवृत्ति पनप सकती है, क्योंकि हमारे देश में अभी भी ज्यादा संख्या में पुरुष ही बैंक से जुड़े हुए हैं। इस योजना को लागू करने से बैंकों पर काम का दबाव बढ़ेगा। भारतीय बैंकिंग क्षेत्र पहले से ही मानव संसाधन की कमी का सामना कर रहे हैं।

जरूरतमंद कौन है, इसकी पहचान करना सरकार के लिए मुश्किल भरा कार्य होगा। इस प्रक्रिया को अमलीजामा पहनाने में भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलेगा। अपात्र व्यक्ति भी इस योजना का लाभ लेने में सफल हो सकता है। एक अनुमान के मुताबिक देश में मौजूदा कल्याणकारी योजनाओं को लागू करने की लागत सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का 3.7 फीसद है, जबकि प्रस्तावित योजना की लागत जीडीपी का 4.9 फीसद होने का अनुमान है। लागत बढ़ने से पूंजी की व्यवस्था करना भारत जैसे विकासशील देश के लिए आसान नहीं होगा।

आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन (ओईसीडी) के अनुसार किसी भी देश ने बुनियादी आय को 'कामकाजी उम्र' के लोगों के लिए आय समर्थन का एक प्रमुख स्तंभ नहीं माना है। लेकिन कई देशों में कुल आबादी के एक छोटे से भाग पर इस संकल्पना को आजमाया गया है। अमेरिका और ईरान का नाम इस संदर्भ में लिया जा सकता है। अमेरिका का 'अलास्का स्थायी कोष' एक निवेश कोष है, जिसका निर्माण तेल राजस्व की मदद से किया गया है। वर्ष 1982 से इस निधि से अलास्का के प्रत्येक व्यक्ति को वार्षिक लाभांश का भुगतान किया जा रहा है। इसी तरह का एक प्रयोग वर्ष 2011 में ईरान में किया गया था, जिसके तहत औसत दर्जे की घरेलू आय के उनतीस फीसद को हर महीने जरूरतमंदों को हस्तांतरित किया गया था। इसी तरह की योजना को लागू करने की घोषणा कनाडा, फिनलैंड और नीदरलैंड में भी की गई है। स्विट्जरलैंड, फ्रांस, न्यूजीलैंड, नामीबिया, स्कॉटलैंड और जर्मनी में भी ऐसी योजना को लागू करने के लिए प्रयास किए जाते रहे हैं।

बुनियादी आय योजना से लाभ और नुकसान दोनों होने की संभावना है। भारत जैसे बड़े और विविधता से परिपूर्ण देश में इसे लागू करना आसान नहीं है। सार्वभौमिक बुनियादी आय को लागू करने के लिए संसाधनों की जरूरत होगी, जिसके लिए मौजूदा सरकारी योजनाओं जैसे मनरेगा, सार्वजनिक वितरण प्रणाली आदि को बंद करना होगा। अगर ऐसा हुआ तो लोगों के बीच अविश्वास का माहौल बनेगा। लाभार्थियों की पहचान करने में भी समस्याएं आएंगी। देश में अशिक्षा और गरीबी का दायरा बहुत व्यापक है। अनपढ़ और बेरोजगारों की बड़ी फौज इस योजना से मिलने वाले लाभ को अपना अधिकार समझने लगेगी। इसका देश के कार्यबल पर नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। सबसे बड़ा नुकसान श्रमिक बल में कमी आने से अर्थव्यवस्था पर पड़ेगा। काम-धंधों की रफ्तार मंद पड़ने से उत्पादन की गति धीमी होगी, इससे मांग और आपूर्ति के बीच असंतुलन पैदा होगा और विकास को धक्का लगेगा।

अंधविश्वास के पांव

रजनीश जैन

दुनिया मेरे आगे

इसमें कोई विवाद नहीं है कि हमारे देश में प्राचीन संस्कृत ग्रंथों की बहुतायत रही है। इनमें दर्शन, इतिहास, साहित्य, अध्यात्म और विज्ञान जैसे विषय शामिल हैं। एक समय अधिकतर ग्रंथों का अरबी, फारसी, चीनी, जापानी और जर्मन भाषाओं में अनुवाद होना सामान्य घटना मानी जाती थी। आज यह सारा ज्ञान अनूदित होकर कई शोध पत्रों और पुस्तकों में संरक्षित हो गया है। इनकी बदौलत वेदों और उपनिषद की ऋचाएं समूचे विश्व के विद्यार्थियों के पास पहुंच गई हैं। निश्चय ही यह उपलब्धि गर्व करने लायक है। अगर इस बात का डंका बजाया जाता है तो इसमें कोई बुराई भी नहीं है। दिक्कत मीडिया के एक हिस्से से है जो इन ग्रंथों को आधार बना कर अनर्गल बातें अपने दर्शकों के मानस में उंड़ेल रहा है। लगभग सभी चैनलों पर ज्योतिष के कार्यक्रमों की बढ़ती भीड़ को समाज के हित में नहीं माना जा सकता, क्योंकि इसके बहाने अंधविश्वास का फैलाव व्यापक पैमाने पर हो रहा है।

ज्यादा घातक और चिंताजनक बात यह है कि इसी के साथ अवैज्ञानिक तथ्य भी विज्ञान की शक्ल में परोसे जा रहे हैं। यह सब इसलिए भी हानिकारक है कि जनमानस ही नहीं, बल्कि समाज का प्रबुद्ध वर्ग भी अब अंधविश्वासों का तर्क सहित विरोध करने, वैज्ञानिक आधारों का हवाला देने के बजाय इनके बारे में ही बात करने लगा है।

सूचना के अंधड़ में हमारा विवेक ध्वस्त होने लगा है, क्योंकि हर तीसरे दिन प्रकट होने वाला नया दावा कहीं न कहीं हमारी वैज्ञानिक सोच को कुतरने लगा है। अक्सर इस तरह के कपोल-कल्पित रहस्योद्घाटन किसी ऊंचे कद के दिखने वाले नेता के मुखारविंद से टपक रहे हैं। लिहाजा, उन्हें मीडिया या प्रचार माध्यमों के बड़े हिस्से में खासी जगह मिल रही है। प्राचीन साहित्य और मिथकों से निकाल कर लाई जा रही ऐसी मनभावन पेशकश समग्र वैज्ञानिक सोच को चुनौती देने लगी है। सामान्य प्राकृतिक घटनाओं को प्राचीन धारणाओं के चश्मे से देखा जा रहा है।

हम पीछे क्यों देख रहे हैं? कहीं इसके अवचेतन में कोई हीन भावना तो काम नहीं कर रही है? यह चलन इतनी तेजी से बढ़ रहा है कि डार्विन, न्यूटन और आइंस्टाइन जैसे महान वैज्ञानिकों और शख्सियतों को खारिज किया जा रहा है। बात शायद गणेश की प्लास्टिक सर्जरी से शुरू हुई थी, बढ़ते-बढ़ते हाल ही में संपन्न विज्ञान कांग्रेस के मंच तक जा पहुंची। एक शोधपत्र ने यह साबित किया कि किसी जमाने में हमारे यहां चालीस इंजनों वाले विमान थे और दूसरे ग्रहों पर जाना सामान्य बात थी... रावण के पास अपना हवाई अड्डा था। एक वैज्ञानिक ने स्टीफन हॉकिंग के ब्लैक होल सिद्धांत को हास्यास्पद बता दिया। एक ने कौरवों की पैदाइश टेस्ट ट्यूब से घोषित कर दी, तो एक अन्य ने न्यूटन और आइंस्टाइन के सिद्धांत गलत बता दिए! टीवी मीडिया के लिए माना जा सकता है कि उसके अस्तित्व के लिए इस तरह का कचरा परोसना एक नियमित काम का हिस्सा हो सकता है। लेकिन आखिर कब तक वे ऐसा करते रहते हैं? क्या इन्हें सिर्फ अस्तित्व बचाने की कवायद तक सीमित रहना है? विश्वसनीयता और इस तरह के अनर्गल दावों के लिए शोध करने का दायित्व वहन नहीं करना है?

विज्ञान कांग्रेस के मंच से इस तरह की बातों पर जब सवाल किया गया तो विद्वान वैज्ञानिक का मासूम जवाब था कि ये बातें संस्कृत के ग्रंथों में लिखी हैं तो गलत तो हो ही नहीं सकतीं। इस तरह का दावा उन्होंने बगैर सोचे-विचारे अपने नाम से सार्वजनिक रूप से कर दिया। उन्हें शायद इस बात का खयाल नहीं रहा कि वे जिस वैज्ञानिक समुदाय के सामने ऐसी बात कर रहे हैं, उनकी नजर में इसे कैसे देखा जाएगा! हालांकि इस तरह के दावों को समय-समय पर अकाट्य तर्कों की मदद से बेबुनियाद ठहराया जाता रहा है। लेकिन खारिज करने की सकारात्मक खबरों को इतनी अहमियत मीडिया में नहीं मिलती, जितनी इनके प्रचार के समय मिलती है। यहीं यह समझना मुश्किल हो जाता है कि संचार माध्यमों के काम में इस तरह का दोहरापन क्यों होता है। जबकि सच यह है कि सही सूचनाएं आम लोगों तक पहुंचाना समूचे मीडिया की जिम्मेदारी है।

निश्चित ही समय का यह दौर गंभीर चिंतन करने का है। एक पूरी पीढ़ी इस दुविधा में है कि वाट्सऐप और फेसबुक जैसे माध्यमों पर अनवरत आ रही जानकारी को सही मानें या वैज्ञानिक साहित्य पढ़ें! जन सामान्य को कौन-सा साहित्य पढ़ना चाहिए और कौन-सा नहीं, ताकि वह कूपमंडूकों के रेवड़ का हिस्सा न बन सके। इस दिशा में भी काफी कुछ प्रयास करने की आवश्यकता है। प्रसार माध्यमों और शिक्षण संस्थाओं की भूमिका को अहम माना जा सकता है कि वे ही अंधेरे को दूर करने में मदद करते हुए अंधविश्वास के फैलाव को रोक सकते हैं। यह ध्यान रखना चाहिए कि विकास के सारे चरण प्रतिगामी हो जाएंगे, अगर अंधविश्वासों से मुक्ति का रास्ता नहीं अपनाया गया!

आतंक का सबक

पुलवामा में मुट्ठी भर आतंकवादियों के कायराना हमले के बाद लहूलुहान देश दुख से भीगा और गुस्से से उबल रहा है। इस हमले में सीआरपीएफ के 42 जवान शहीद हो गए। ज्यादा दुख की बात यह रही कि हमारे जांबाज जवानों को अपने दुश्मन से सीधे छाती तान कर मुकाबला करने का मौका नहीं मिला, बल्कि वे एक डरपोक, छुपे और कायराना हमले का शिकार हुए। किसी जवान का कुछ दिनों में विवाह था, किसी के पीछे रह गया उसका 15 दिन का दुधमुंहा बालक, किसी को 15 दिन बाद बेटी के हाथ पीले करने थे और कोई छोड़ गया पीछे अपने बूढ़े बेसहारा लाचार मां-बाप।

अगर एक डरपोक पड़ोसी मुल्क और उसके पिट्ठू आतंकवादी 2500 हथियार बंद जवानों के काफिले पर हमले की जुर्रत कर पाए तो उसमें उनके सहायक बने हैं हमारे ही मुल्क में छिपे गद्दार। पड़ोसी मुल्क को इस हमले को अंजाम देने के लिए न तो अपने सैनिक भेजने पड़े और न बारूद। यह घिनौना मकसद पूरा करने के लिए उसे बस यहीं के चंद नौजवानों के दिमाग में जेहादी जहर भरना पड़ा। उसे यह मौका चंद सिक्कों के लालच में यहीं के जयचंदों ने आसानी से उपलब्ध करा दिया। यहां के कुछ गद्दार सेना से मुठभेड़ में या पत्थरबाजी के दौरान देश के दुश्मनों के मरने पर तो छाती पीटते नजर आते हैं लेकिन सेना के जवान के शहीद होने के पीछे राजनीति ढूंढ़ते हैं।

अगर किसी शहीद का पिता दूसरे बेटे को भी देश पर कुर्बान करने का जज्बा रखता है तो हमारा भी फर्ज है उसके जज्बे का सम्मान करने का। सेना पर हमला चाहे गोली से हो, चाहे बोली से या पत्थर से, उसके दोषी को देश का दुश्मन मान कर ही सलूक करना चाहिए। अगर कोई सेना को अपने मुल्क की रक्षा करने से रोकता है, तो उसे भटके हुए नौजवान की बजाए आतंकवादियों का समर्थक मान कर सबक सिखाना चाहिए।

पुलवामा हमला भारत की बहादुर सेना को सीधी चुनौती है। हर हमले के बाद सिर्फ निंदा करने, भारी भरकम बयानबाजी करने, जिम्मेवार मुल्क को 'डोजियार' सौंपने और उससे तरजीही मुल्क का दरजा का दर्जा वापस लेने से यह समस्या सुलझने वाली नहीं। समय है देश को अपनी साफ्ट स्टेट यानी उदार राष्ट्र की छवि को तिलांजलि देने का। देश को मजबूत और अपनी रक्षा में इतना सक्षम बनाने का कि हर दुश्मन उस पर हमले से पहले अपने अंजाम से डर कर थर-थर कांपे। हमले के जिम्मेवार कुटिल मुल्क को दुनिया भर में उसकी चालों के लिए बेपर्दा करना होगा। ऐसे मुल्क के साथ किसी तरह का रिश्ता न रखा जाए, न राजनीतिक, न खेलों का, न सांस्कृतिक और न ही व्यापार का। यही वक्त है ऐसे देश से निपटने के लिए पूरे विश्व में उसके विरुद्ध मोर्चाबंदी की जाए।

● *लेफ्टिनेंट कुलदीप शर्मा, जालंधर*

डिजिटल देशभक्ति

अगर आप काली डीपी लगा देते हैं, कैंडल मार्च में जाकर सेल्फी पोस्ट कर देते हैं, 'आरआईपी' लिख कर दिन में पचास स्टेटस डालते हैं, कमेंट में अनजाने लोगों से भिड़ जाते हैं, बिना जांचे-परखे भड़काऊ पोस्ट शेयर करते हैं, और फोन हाथ में पकड़ सोफे में बैठ जंग और बदले की मांग करते हैं तो आप डिजिटल देशभक्त हैं!

अगर आप सच्चे देशभक्त हैं तो सरकार और फौज पर भरोसा रखिए। सच्चे दिल से शहीदों को नमन कीजिए। फोन में स्टेटस डाल कर नहीं, फोन से शहीदों के परिवारों की मदद कीजिए। शांति रखिए और शांति फैलाइए, फर्जी या झूठे मैसेज नहीं। कुछ भी शेयर करने से पहले जांचें कि वह सही है या नहीं। नकारात्मकता से दूर रहें और एकता बनाए रखें क्योंकि हमारी एकता भंग करना ही दुश्मन का मकसद है। सबसे जरूरी यह कि अगर सच्चे देशभक्त हैं तो भारत बंद करने, रैलियां निकालने, फोटो शेयर करने के बजाय अपने काम को ईमानदारी से करें। यह देश के विकास के लिए आपका बड़ा योगदान होगा। डिजिटल देशभक्ति से दूर रहिए!

● *नेहा अधिकारी, नई दिल्ली*

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com

कब तक

भारत हर बार चौंक जाता है। 2001 में देश की संसद पर हुए आक्रमण से हम चौंके थे। 2008 में मुंबई में विभिन्न जगहों पर भीषण आतंकी हमले से हम अचंभित हो गए थे। शायद इसी वजह से भारत में एक नई जांच एजेंसी अस्तित्व में आई- एनआइए यानी राष्ट्रीय जांच एजेंसी। फिर भी हम लगातार छद्म युद्ध का शिकार होते रहे हैं 2016 में उड़ी, फिर पठानकोट और अब पुलवामा में। हर बार देश के लोगों में गुस्सा भर जाता है। हर बार हम पाकिस्तान को नक्शे से मिटा देने की मांग करने लगते हैं लेकिन अपनी कमियों की ओर न ध्यान देते हैं न सरकार को ध्यान दिलाते हैं।

कई प्रश्न उठ खड़े हुए हैं पुलवामा के बाद। मसलन, इतनी व्यापक सुरक्षा व्यवस्था के बावजूद कैसे इतनी ज्यादा मात्रा में आरडीएक्स वहां निर्बाध पहुंच गया? आखिर अपने खुफिया तंत्र की निष्क्रियता हम कब तक बर्दाश्त करते रहेंगे? हम युद्ध नहीं चाहते। युद्ध किसी समस्या का हल भी नहीं है। मगर बंदूक और कर्फ्यू के जरिए भी हम कब तक घाटी का शासन चलाते रहेंगे?

● *जंग बहादुर सिंह, गोलपहाड़ी, जमशेदपुर*

संकट की दस्तक

राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान के अनुसार भारत में विकास की रफ्तार बढ़ने के साथ-साथ पानी का संकट भी बढ़ेगा और कई इलाकों में उसके लिए मारामारी मचेगी। दरअसल, हमारी आधुनिक जीवनशैली प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन पर आधारित है जिससे पानी का उपयोग निरंतर बढ़ता जा रहा है। अभी पानी की मांग प्रति व्यक्ति सौ से एक सौ दस लीटर है जो 2025 तक बढ़ कर एक सौ पच्चीस लीटर हो सकती है। तब तक भारत की आबादी एक सौ अड़तीस करोड़ हो जाएगी। आज हालत यह कि राजधानी दिल्ली तक का पानी पीने लायक नहीं रहा है क्योंकि इसमें क्लोराइड की मात्रा तय सीमा से अधिक पाई गई है।

यह सब औद्योगिक गतिविधियों और व्यापक शहरीकरण के कारण हो रहा है जिससे देश के वन क्षेत्र में लगातार कमी आ रही है। वन क्षेत्र में कमी के चलते वर्षा की मात्रा भी कम होती जा रही है। यही ग्लोबल वार्मिंग का मुख्य कारण है। ग्लोबल वार्मिंग के कारण ग्लेशियर पिघल रहे हैं जिससे समुद्री क्षेत्र जलमग्न हो रहे हैं। ऐसे में हमें अपने संसाधनों का विवेकपूर्ण प्रयोग करना होगा। साथ ही अधिक से अधिक पेड़ लगाने होंगे और पर्यावरण के अनुकूल जीवनयापन के नए तरीके खोजने होंगे। जीवाश्म ईंधन पर अपनी निर्भरता भी कम करनी होगी।

● *चांद मोहम्मद, आंबेडकर कॉलेज, दिल्ली*